ईरान के प्रति मुग़लों की भावना

प्रत्यक्ष रूप से तो मुग़ल सम्राट् ईरान के दरबार के प्रति सौहार्द एवं सौजन्यपूर्ण भावनाएँ व्यक्त करते रहते थे परन्तु वस्तुतः इन दोनों में पारस्परिक ईर्ष्या, अविश्वास एवं स्पर्द्धा के विचारों के भी सुस्पष्ट प्रमाण मिलते हैं। ईरानी शासकों ने मुग़ल सम्राटों की शानदार और वैभवयुक्त उपाधियों को कभी भी मान्यता न दी। उनकी भावना सर्वदा संशयात्मक ही रही। पत्र-व्यवहार में वे निरन्तर दो ही घटनाओं पर बल देते रहे : शाह इस्माईल द्वारा बाबर की सहायता और शाह तेहमास्प द्वारा हुमायूँ का संरक्षण और इस प्रकार वे अपनी श्रेष्ठता प्रमाणित करते रहे। इसके विपरीत मुग़ल सम्राट् दो कारणों से अपने को ईरान के शाह से श्रेष्ठतर समझते थे। उनका व्यापक और विस्तृत साम्राज्य तथा उनकी धन-सम्पत्ति की दुनिया में धूम। परन्तु इस पारस्परिक मनमुटाव के बावजूद दोनों दरबारों में दूतों का आदान-प्रदान होता ही रहा। इसके पीछे दो उद्देश्य निहित थे : (१) गुप्त समाचारों की प्राप्ति तथा (२) एक राज्य को दूसरे राज्य के वैभव से प्रभावित करना।[1]

चग़ताई और सफविद शासकों के पारस्परिक सम्बन्धों में कन्दहार आधिपत्य के विषय को लेकर प्रायः विघ्न पड़ जाता था। शाह इस्माईल उसको अधिकृत करने की लालसा ही बनाए रहा कि बाबर ने उसे हड़प लिया।[2] हुमायूँ की मृत्यु के उपरान्त मुग़ल साम्राज्य में जो उथल-पुथल हुई उससे लाभ उठाकर शाह तेहमास्प ने उसको हस्तगत कर लिया, किन्तु अकबर महान् ने सुअवसर पाते ही उस पर चालबाजी से पुनः अधिकार कर लिया।[3] जब सफ़वी सम्राटों में सबसे महान् शाह अब्बास प्रथम सत्तारूढ़ हुआ तो उसने कन्दहार को पुनः अधिकृत करना ही अपनी नीति का प्रमुख अंग बना लिया। बार-बार सन्देशवाहक भेजकर उसने मधुर शब्दों द्वारा न केवल समकालीन मुग़ल सम्राट् जहाँगीर की शंका को दूर ही कर दिया बल्कि उसको अपनी शुभ भावनाओं और अगाध निष्ठा के विश्वास से भी ओतप्रोत कर दिया। यहाँ तक कि उसका दूत ज़बल बेग जब मुग़ल दरबार में उपस्थित था तभी उसने कन्दहार की सुरक्षा-व्यवस्था के दोषों से लाभ उठाकर उस पर अकस्मात् चढ़ाई कर दी और दुर्ग को अधिकृत कर लिया। फिर उसने अपने व्यवहार की सफ़ाई में अपने छल का बहाना प्रस्तुत करते हुए जहाँगीर को एक पत्र भी लिख मारा, और इस प्रकार जले पर नमक छिड़क दिया।[4]

राजकुमार शाहजहाँ और अब्बास के मध्य निजी सम्पर्क

इस घटना के पश्चात् कुछ समय तक दोनों दरबारों में सम्बन्ध तनावपूर्ण ही रहे,

Scanned with CamScanner

परन्तु राजकुमार शाहजहाँ और शाह अब्बास प्रथम के बीच निजी एवं अनधिकृत पत्र-व्यवहार जारी रहा। इन पत्रों को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि शाह राजकुमार शाहजहाँ की विद्रोह वृत्ति को प्रोत्साहन देता रहा और शाहजहाँ शाह की सफलता में रस लेता रहा और वह भी इस कारण कि उसका विश्वास था कि ऐसा करने से नूरजहाँ की साजिश चकनाचूर हो जाएगी। बहरहाल कन्दहार मुग़ल आधिपत्य के बाहर निकल गया। सच तो यह है कि राजकुमार शाहजहाँ ने घर फूँक कर तमाशा देखा। शाह अब्बास ने तो अपना स्वार्थ सिद्ध कर लिया पर शाहजहाँ को जो बुरे दिन देखने बदे थे वे उसने देखे। अन्त में विवश होकर उसको आत्मसमर्पण भी करना पड़ा। इसके बाद उसने शाह को एक अन्तिम पत्र लिखा। परन्तु जब शाह को राजकुमार परवेज़ के स्वर्गवास की सूचना मिली तो उसने शोकग्रस्त मुग़ल सम्राट् जहाँगीर के प्रति अपनी संवेदना अभिव्यक्त करने हेतु एक दूत भेजना ही उचित समझा। इस कार्य के लिए उसने तख़त बेग[५] को चुना, परन्तु दूत के ईरान से प्रस्थान करने के पूर्व ही वहाँ जहाँगीर के देहावसान की सूचना पहुँच गई तथा दूत का प्रस्थान स्थगित हो गया। कुछ समय बाद जब शाह अब्बास प्रथम को मुग़ल सम्राज्य में घटित उपद्रवों का समाचार मिला तब उसने शाहजहाँ के पास बेहरी बेग को एक पत्र देकर भेजा और यह कहा कि यदि आवश्यकता हो तो वह सहयोग देने को तैयार है। उक्त दूत का स्वागत आगरा से कुछ दूर पर मोतक़िद खाँ ने किया तथा ५ जुलाई सन् १६२९ ई० को उसे दरबार में उपस्थित किया।[६]

राजदूत मुहम्मद अली बेग व मीर बरका

बेहरी बेग अभी मार्ग में ही था कि ९ जनवरी सन् १६२९ ई० को माज़नदरान में शाह अब्बास प्रथम की मृत्यु हो गई। उसके स्थान पर उसका पौत्र साम मिर्ज़ा गद्दी पर बैठा। वह अभागे सफ़ी मिर्ज़ा का पुत्र था। सत्तारूढ़ होने के उपरान्त उसने अपने पिता की ही उपाधि धारण की तथा इतिहास में वह शाह सफ़ी के नाम से प्रसिद्ध है। समसामयिक परम्परा के अनुरूप शाह ने यह उचित समझा कि शाहजहाँ को उसके सिंहासनासीन होने के उपलक्ष में बधाई देने को शीघ्र से शीघ्र राजदूत भेजे। इस कार्य के लिए उसने मुहम्मद अली बेग को चुना और उसको आगरा रवाना कर दिया। जो पत्र उसके द्वारा भेजा गया उसकी शब्दावली यथारीति प्रशस्तिरंजित थी और उसमें अर्थविहीन लच्छेदार वाक्य भरे पड़े थे।[७] इसी दौरान शाहजहाँ को शाह अब्बास प्रथम की मृत्यु का समाचार मिला और उसने मीर बरका को उसी आशय से (अर्थात् नए शाह को बधाई देने और सहानुभूति प्रदर्शित करने) ईरान भेजा।[८] सम्भवतः दोनों राजदूतों ने मार्ग में एक दूसरे को पार भी किया होगा किन्तु उनकी भेंट का कोई संकेत उपलब्ध नहीं है।

शाह ईरान के नाम शाहजहाँ का पत्र

शाहजहाँ ने अपने पत्र में बेहरी बेग के आगमन को अभिस्वीकार किया, शाह सफ़ी को उसके गद्दी पर बैठने के लिए बधाई दी, भूतपूर्व दिवंगत शाह के साथ अपने स्नेहपूर्ण सम्बन्धों का संकेत किया तथा शत्रुओं और प्रतिद्वन्द्वियों के संहार के पश्चात् अपनी ताजपोशी का भी विवरण दिया। फिर भूतपूर्व शाह के सहयोग प्रस्ताव के प्रत्युत्तर में

Scanned with CamScanner

शाहजहाँ ने शाह सफ़ी को यह लिखा कि वह उसकी स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए उसकी सहायता करने को सर्वदा तत्पर है। पत्र के अन्त में शाहजहाँ ने शाह सफ़ी को उसके हितार्थ यह सलाह भी दी कि वह अपने पितामह के ही पदचिह्नों पर चलने का प्रयास करे। चूंकि इस समय शाह तुर्कों से संघर्ष में संलग्न था इस कारण मीर बरका को उससे साक्षात्कार के लिए इस्फ़हाँ में प्रतीक्षा करनी पड़ी। शाह के वापस आने के बाद मुग़ल राजदूत ने उसके समक्ष वे उपहार रखे जो कि वह अपने स्वामी के पास से लाया था। यद्यपि शाहजहाँ ने अपने पत्र में मीर बरका को शीघ्र से शीघ्र वापस कर देने का आग्रह किया था, फिर भी उसको ईरानी दरबार में एक वर्ष से अधिक रुकना पड़ा।[8]

मुहम्मद अली बेग का स्वागत

जब मुहम्मद अली बेग आगरा पहुँचा तो मुग़ल सम्राट् वहाँ न था। खानेजहाँ लोदी के विद्रोह का दमन करने वह दक्षिण गया हुआ था। परन्तु जैसे ही शाहजहाँ को उसके पहुँचने की सूचना मिली उसने उसकी दक्षिण-यात्रा की उचित व्यवस्था कर दी क्योंकि वह उसको आगरा में अपनी वापसी तक रोके न रखना चाहता था। सम्राट् ने मकरमत खाँ को एक सरोपा दिया और उसे बुरहानपुर से यह आदेश देकर भेजा कि मार्ग में जहाँ कहीं भी ईरानी राजदूत से उसका भेंट हो जाए वहीं पर वह उसको सम्मानित कर दे। मकरमत खाँ को यह भी निर्देश दिया गया कि वह मुहम्मद अली बेग के साथ माँडू तक आकर उसको मालवा के सूबेदार मोतक़िद खाँ के संरक्षण में सौंप दे।[10]

मांडू में कुछ समय रुककर मुहम्मद अली बेग ने दक्षिण की ओर प्रस्थान किया। बुरहानपुर के समीप पहुँचने पर अफ़ज़ल खाँ और सादिक खाँ ने आगे बढ़कर उसका स्वागत किया। अतः जब दरबार में उसका सम्राट् से साक्षात्कार हुआ तब उसने अपने स्वामी का पत्र सम्राट् की सेवा में प्रस्तुत किया। उसी दिन शाहजहाँ ने उसको बीस हजार रुपए मूल्य के उपहार दिए। इसके छः दिन बाद मुहम्मद अली बेग ने तीन लाख रुपए मूल्य के वे उपहार सम्राट् के सामने पेश किए जो कि वह ईरान से लाया था। शाहजहाँ ने मुक्तहस्त से ईरानी राजदूत को उपहार दिए तथा उसको अपने वैभव से प्रभावित करने के लक्ष्य से वह कोई भी ऐसा अवसर न जाने देता था जबकि उसको मूल्यवान भेंट न प्रदान की हो। मुहम्मद अली बेग १२ सितम्बर सन् १६३१ ई० तक बुरहानपुर में रहा। तत्पश्चात् उसे आगरा जाने को कहा गया ताकि वहाँ पहुँचकर वह अपनी वापसी की व्यवस्था करे। परन्तु जबतक मीर बरका ईरान से लौटकर न आ गया (अर्थात् ३० जून सन् १६३२ ई०) तबतक मुहम्मद अली बेग को विदाई न मिली।[11]

क़ुशंज के ज़मींदार का मुग़ल दरबार में आना

इसी दौरान कन्दहार में एक ऐसी घटना हो गई जिसके फलस्वरूप मुग़ल सम्राट् और ईरान के शाह के पारस्परिक सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों में विघ्न पड़ने की सम्भावना तो हो गई पर संयोगवश ऐसा हुआ नहीं। जब से शाह अब्बास प्रथम ने कन्दहार को पुनरधिकृत कर लिया था तब से शेर खाँ तरीन ही क़ुशंज का हाकिम था। शाह उसका बहुत आदर

Scanned with CamScanner

करता था। परन्तु शब्बास की मृत्यु के बाद वह अनुशासनहीन हो गया और ईरान और भारत आने-जाने वाले यात्रियों को लूटने लगा। कन्दहार का गवर्नर अली मरदान खाँ उसको दण्डित करने की ताक में था। अतः जब शेर खाँ सन् १६३०-३१ ई० में लौटी पर छापा मारने चला गया तो मौका पाकर अली मरदान खाँ ने एक हजार सिपाही साथ लेकर कुलंज पर धावा बोल दिया और उसको अधिकृत कर लिया। शेर खाँ ने डट कर युद्ध किया, पर पराजित हुआ। उसने भाग कर दोकी में शरण ली। तत्पश्चात् उसने मुलतान के सूबेदार अहमद खाँ का सहारा लिया और उसको एक पत्र लिखा। अहमद खाँ ने इस प्रार्थना-पत्र को दरबार में भेज दिया। सम्राट् ने प्रार्थना स्वीकार कर ली तथा १३ मार्च सन् १६३२ ई० को शेर खाँ ने मुगल सम्राट् से साक्षात्कार किया। उसको पंजाब में एक जागीर दे दी गई।[१२]

सफ़दर खाँ का ईरान जाना

शाहजहाँ ने सफ़दर खाँ को अपना दूत बनाकर ईरान भेजने के लिए चुना। १६ मई सन् १६३३ ई० को उसने आगरा से प्रस्थान किया। शाह को भेंट में देने के लिए उसको तीन लाख रुपए मूल्य के उपहार दिए गए। शाहजहाँ ने अत्यन्त सावधानी एवं सतर्कता से उसको उस शिष्टाचार से अवगत कराया जिसके अनुरूप उसको ईरान के दरबार में व्यवहार करना था और इस सम्बन्ध में उसको सविस्तार निर्देश भी दिए। जो पत्र उसको शाह के नाम दिया गया था वह अफ़ज़ल खाँ का लिखा हुआ था। उसमें मुहम्मद अली बेग के दूत-कार्य की ओर तो संकेत था ही और फिर बल देकर शाह से यह आग्रह किया गया था कि वह सुयोग्य कर्मचारियों का पोषण करे और सम्राट् के कर्तव्यों का यथोचित पालन करे। इन कर्तव्यों का विश्लेषण भी किया गया। अन्त में खानेजहाँ के विद्रोह के दमन, कुतुबुल मुल्क के आधिपत्य स्वीकार करने, आदिलशाह के विरुद्ध अभियान, हुगली के ग्रहण तथा पुर्तगालियों के सर्वनाश का भी संक्षिप्त विवरण था। यथापद्धति दूत को शीघ्र वापस भेजने का आग्रह भी किया गया।[१३]

सफ़दर खाँ का स्वागत

सफ़दर खाँ के इस्फ़हाँ पहुँचने के समय तक शाह सफलतापूर्वक इरवान का अभियान समाप्त कर चुका था।[१४] राजदूत का शाह से काशान में साक्षात्कार हुआ तथा सम्राट् शाहजहाँ की आशा के विपरीत उसको ईरानी दरबार में दीर्घकाल तक रुकना पड़ा। परन्तु इसका परिणाम लाभप्रद ही निकला। वह छाया के समान शाह सफ़ी के पीछे-पीछे डोलता रहा और उसने अपने स्वामी अर्थात् मुगल सम्राट् के लिए वही काम किया जो कि जबल बेग ने जहाँगीर के राज्यकाल में ईरान के शाह के लिए किया था। दूसरे शब्दों में वह शाहजहाँ को शाह सफ़ी की राजनीतिक उलझनों की निरन्तर सूचनाएँ भेजता रहा।

शाह अब्बास की मृत्यु के बाद ईरान की दशा

शाह अब्बास की मृत्यु के उपरान्त ईरान में बाह्य एवं आन्तरिक शान्ति जादू के

समान भंग हो गई। देश के शत्रुओं ने अपनी अग्राक्रमणी योजनाओं को पुनः संचालित कर दिया। पश्चिमी सीमा पर तुर्की का युद्धलोलुप सुलतान मुराद चतुर्थ और पूर्व में हश्तरखानी और उजबेग ईरान के लिए सर्वदा संत्रास के कारण बने रहते थे। हश्तरखानियों और उजबेगों को तो ख़ुरासान के प्रांतपति ने मार भगाया किन्तु मुराद चतुर्थ इनसे ज्यादा शक्तिशाली एवं संकल्पवान सिद्ध हुआ। सन् १६३० ई० में उसने कुर्दिस्तान में घुस कर एक ईरानी सेना को पराजित किया और हमादान को अधिकृत कर लिया। अगले वर्ष उसने बग़दाद पर असफल आक्रमण किया और चार वर्ष बाद (सन् १६३५ ई०) में ईरवान पर अधिकार कर लिया, परन्तु आगामी वसंत ऋतु में उसको वहाँ से खदेड़ दिया गया।[१५]

परन्तु ईरवान के पुनः अधिकृत कर लेने के उपरात भी पश्चिमी सीमा पर संघर्ष समाप्त न हुआ। कुछ ही समय बाद कुर्दिस्तान के प्रांतपति अहमद बेग खाँ अरदालान ने विद्रोह कर दिया तथा तुर्की की शह पाकर उसने बहुत विपत्ति पैदा कर दी। परन्तु शीघ्र ही ईरानी सेना ने विद्रोही और उसके समर्थकों को परास्त कर दिया। संघर्ष के दौरान ही अहमद बेग खान मार डाला गया। इसके बाद मुराद चतुर्थ ने बग़दाद पर फिर चढ़ाई की, दूसरी ओर ख़ुरासान पर उज़बेगों की ओर से आक्रमण का खटका पैदा हो गया। इसके अलावा तुर्कों ने ईरवान पुनः हस्तगत करने का भी प्रयास किया, परन्तु वह असफल रहा।[१६] इन राजनीतिक उपद्रवों के फलस्वरूप शाह सफ़ी स्वभावतः बहुत ही चिन्तित रहने लगा तथा उसके दरबार में भी कुछ हलचल पैदा हो गई। इस परिवर्तनशील गतिविधि का सविस्तार वृत्तान्त अवश्य ही सफ़दर खाँ ने अपने स्वामी के पास भेजा होगा।

मिर्ज़ा हुसैन का ईरान जाना

अभी शाह सफ़ी अपने शत्रुओं से जूझ ही रहा था कि उसके दरबार में भारत से एक और राजदूत आ पहुँचा। इसका नाम था—मिर्ज़ा हुसैन।[१७] जो पत्र वह शाह के नाम ले गया था उसका विवरण इस प्रकार है — दौलताबाद की विजय, जुझारसिंह के विद्रोह का दमन, बीजापुर पर चढ़ाई, आदिलशाह का अधीनता स्वीकार करना और बीस लाख रुपए देने का वादा। अन्त में शाहजहाँ ने यह लिखा कि उसने राजकुमार औरंगज़ेब को दक्षिण का प्रांतपति नियुक्त कर दिया है और वह स्वयं आगरा आ गया है। पत्र में प्रदर्शित भावनाओं के दो रूप हैं, प्रत्यक्ष और प्रच्छन्न। प्रत्यक्ष रूप से तो मिर्ज़ा हुसैन का यह कर्तव्य था कि ईरान पहुँचकर ईरान के शाह के प्रति मुग़ल सम्राट् के मैत्रीपूर्ण एवं सौहार्दपूर्ण विचारों की पुष्टि करे तो प्रच्छन्न रूप से उसके वहाँ जाने का लक्ष्य था कि सफ़दर खाँ द्वारा भेजे हुए समाचारों की संपुष्टि करे।

अली मरदान खाँ का संशय

वस्तुतः प्रतीत तो यह होता है कि लगभग इसी समय कुछ मुग़ल कर्मचारियों, विशेषकर क़ुलिज खाँ और अली मरदान खाँ के बीच कन्दहार समर्पण की बातचीत चल रही

थी।[१८] नए वज़ीर शारर तक़ी के कठोर शासन-प्रबन्ध से अली मरदान खाँ चिन्तित हो रहा था। इसका कारण यह था कि वज़ीर ने शाह का ध्यान राजस्व की उस भारी राशि की ओर आकर्षित किया था जो कि अली मरदान खाँ के जिम्मे अभी बाकी थी। शाह ने अली मरदान खाँ को लिखा कि वह दरबार में उपस्थित होकर अपनी सफ़ाई प्रस्तुत करे। परन्तु वह ढील डाले रहा और बहाने बनाता रहा।[१९] जब उस पर अधिक दबाव डाला गया तब उसने साफ़-साफ़ यह कह दिया कि उसका प्रधानमन्त्री में ज़रा भी विश्वास नहीं है। फिर उसने यह भी कहा कि यदि उसको कोई संत्रस्त न करे तो वह बारह हज़ार तूमान प्रति वर्ष सरकार को अदा करता रहेगा। यह संदेश देकर उसने अपने पुत्र मुहम्मद अली बेग को दरबार में भेजा, परन्तु शाह को इससे सन्तोष न हुआ। अब जानी खाँ क़ूरचीबाशी ने शाह के सामने यह प्रस्ताव रखा कि कन्दहार के गढ़पति के खिलाफ़ कठोर कार्यवाही अभी स्थगित कर दी जाए, पर शाह ने उसकी बात न मानी। उसने सियामूश क़ुल्लर आक़ासी को अली मरदान के स्थान पर कन्दहार का गढ़पति नियुक्त कर दिया और उसको यह आदेश दिया कि जिस तरह भी हो सके वह अली मरदान खाँ को दरबार में भेज दे।

अली मरदान खाँ की मुग़ल अधिकारियों से सहयोग की प्रार्थना

जब सियामूश एक विशाल सेना लेकर कन्दहार के सामने आ पहुँचा तो अली मरदान खाँ के नैराश्य का कोई ठिकाना न रहा। उसकी चिन्ता इस कारण और बढ़ गई कि गढ़-रक्षक भी एकमत से उसका साथ न दे रहे थे तथा कुछ क़िज़्लबाश सैनिक भाग कर सियामूश के पास चले भी गए।[२०] ऐसी दशा में प्रतिरोध का प्रश्न ही न उठता था। शाह के प्रतिशोध की ज्वाला से भय खाकर उसने कन्दहार के एक प्रमुख ज़मींदार मलिक मगदूद[२१] के इस सुझाव का हृदय से आह्वान किया कि वह मुग़लों से सहयोग की याचना करे। अतः उसने मगदूद के भाई कामरान को ग़ज़नी के गढ़पति ऐवज़ खाँ क़ाक़शाल और काबुल के सूबेदार सईद खाँ के पास यह प्रार्थना करने भेजा कि ऐसे संकट में वे उसकी सहायता करने पधारें। उसने सम्राट् शाहजहाँ को भी इसी आशय का एक पत्र लिखा कि यदि उसका कोई पदाधिकारी पर्याप्त सेना लेकर आ जाए तो वह कन्दहार समर्पित कर देगा। परन्तु जब शीघ्र ही उसकी परिस्थिति अधिकाधिक विकट होती गई तब उसने सईद खाँ और क़ुलिज खाँ से और भी व्यग्रतापूर्वक अपनी याचना को दोहराया।

कन्दहार का समर्पण

१४ फरवरी सन् १६३९ ई० को ऐवज़ खाँ ने ग़ज़नी से कूच किया और बारह दिन की यात्रा कर वह १००० सैनिक लेकर कन्दहार पहुँच गया। अली मरदान खाँ ने उसको दुर्ग में तुरन्त ही प्रविष्ट कर लिया और २८ फरवरी को शाहजहाँ के नाम ख़ुतबा भी पढ़वा दिया। फिर उसने मुग़ल सम्राट् के नाम की टकसाल से निकली हुई नौ नई मुहरें और एक समर्पण-सम्बन्धी पत्र भी रवाना कर दिया। इसमें ऐवज़ खाँ के पहुँचने की सूचना भी थी। इसी बीच सईद खाँ भी काबुल से चल दिया और क़िलात ग़िलज़ई पहुँच

Scanned with CamScanner